श्रीचण्डिका शतक



श्री चण्डिका शतक

ब्रह्मर्षि विश्वात्मा बावरा

दिव्यालोक प्रकाशन
विराट् नगर, पिन्जौर

प्रकाशक
दिव्यालोक प्रकाशन
ब्रह्मर्षि आश्रम,
विराट् नगर, पिन्जौर
फोन : ०१७३३–६५१७०

संपादन : ब्रह्मऋता परिव्राजिका

संस्करण – द्वितीय
जनवरी, १६६८

मूल्य 20/-

शब्द संयोजक एवं मुद्रक:
डच प्रिंटर्ज़
नज़दीक बस स्टैन्ड, पिन्जौर

दो शब्द

करुणामयी माँ की असीम करुणा का प्रत्यक्ष परिणाम है यह 'श्री चण्डिका शतक' जो माँ के अनन्य चरणानुरागी, जिज्ञासु, साधक तथा सुधीजनों की सेवा में सादर समर्पित है। स्नेहमयी जननी अपनी किस सन्तान से, कब, किस अवस्था में, कैसे, क्या कुछ कराना चाहती है, क्या कुछ करा लेती है, यह तो महाज्ञानियों के लिए भी समझ पाना शक्य नहीं तो जनसामान्य की बात ही क्या है! पिछले दिनों 18 सितम्बर 1990 को लण्डन में अचानक ही हृदय रोग से अस्वस्थ हो गया, वहाँ आश्रम के निकट के ईलिंग अस्पताल में नौ दिन रहना पड़ा, जिसमें चार दिन तो विशेष निरीक्षण में रहा और बाद में एकान्त एक कक्ष में रखा गया। एक दिन प्रातः ध्यान के समय मेरे परम वन्दनीय स्वामी श्री विशुद्धानन्द सरस्वती जी महाराज के दर्शन हुए और साथ ही उनके द्वारा उनके कृपाप्रदत्त सारस्वत मंत्र का संस्मरण हो आया तथा ध्यान में ही मंत्र का जाप चलने लगा। ध्यान से उठने पर मंत्र और उसके दाता का आगमन और संस्मरण सब कुछ आश्चर्यप्रद लगा।

बात 1964 की है, एक सज्जन मुझे जयपुर से सवाई

माधोपुर ले गए। वहाँ पर सप्ताह के प्रवचन का कार्यक्रम था। उन दिनों वहाँ शुक सम्प्रदाय के अनुयायी परिवार में ठहरने की व्यवस्था थी। रात्रि में सत्संग के साथ ही दिन में वहाँ के विद्यालयों में भी प्रवचन रखे गए थे। छात्र–छात्राओं में जाना, उनसे बात करना और उन्हें वैदिक विज्ञान से सम्बन्धित विविध विषयों से अवगत कराना मुझे अधिक प्रिय लगता। एक दिन एक विद्यालय से बोलकर आ रहा था, रास्ते में एक सज्जन ने बताया कि यहाँ से थोड़ी दूर पर एक बहुत वृद्ध योगी संत रहते हैं किन्तु वे कभी किसी से मिलते नहीं। मेरी जिज्ञासा पर उन्होंने बताया कि मेरे परपिता बताया करते थे कि उनके बाल्यकाल में भी ये महापुरुष वैसे ही दिगम्बर वेश में रहा करते थे। जो सज्जन मुझे बता रहे थे उनकी आयु भी 75 वर्ष से अधिक थी। उन्होंने कहा कि यहाँ बहुत से ऐसे वृद्ध लोग हैं जो बताते हैं कि उनके पिता, पितामह भी वर्षों से उन्हें इसी प्रकार से देखते आ रहे हैं। एक दूसरे सज्जन ने बताया कि पहले यह महापुरुष रणथम्भौर के निकट एक पहाड़ी की गुफा में रहा करते थे किन्तु अब 60 वर्षों से यहाँ रह रहे हैं। उन महापुरुष के विषय में और कई विचित्र बातें सुनने को मिली, हृदय उत्सुकता से भर गया, उन महापुरुष के दर्शन करने के लिए उस स्थान पर गया जहाँ वे रहते थे। उनका एक कृपापात्र भक्त था जो उनकी नित्यप्रति भोजनादि की सेवा किया करता था। मैंने जाकर उससे कहा कि मैं स्वामी जी के दर्शन करना चाहता हूँ। उसने कहा कि इस विषय में मैं कुछ नहीं कह सकता क्योंकि इस समय वे अपने कमरे में हैं और वहाँ किसी को जाने की आज्ञा नहीं है। मैंने उससे कहा कि तुम स्वयं स्वामी

जी से जाकर प्रार्थना करो और मेरे लिए आज्ञा ले आओ। उसने बड़ी विनम्रता से कहा कि मुझे भी वहाँ जाने की आज्ञा नहीं है, मैं तो केवल उनके लिए एक बार थोड़ा-सा भोजन लेकर जा पाता हूँ, मेरे में साहस नहीं कि मैं उनके पास जाकर कुछ कह सकूँ। मेरे जिज्ञासा व्यक्त करने पर उसने बताया कि पुराने मन्दिर के पीछे जो एक कक्ष है, उसके ऊपर एक छोटा सा कमरा बना हुआ है, स्वामी जी उसी में रहते हैं और उस कमरे में जाने के लिए लकड़ी की सीढ़ी लगी हुई है। स्वामी जी कभी-2 अपनी रुचि से बाहर आ जाते हैं, उन्हें किसी प्रकार से न कोई वहाँ जाकर मिल सकता है और न तो कुछ कह सकता है क्योंकि वे किसी से कोई बात नहीं करते। मेरे पूछने पर उसने बताया कि वह लगभग 35 वर्षों से इसी प्रकार से मौन रूप से स्वामी जी की सेवा करता आ रहा है।

समस्या बड़ी कठिन थी। महापुरुष के दर्शन की जिज्ञासा ओर उनसे उनके अनुभव को सुनने की चाह प्रबल हो गई। दो चार लोग और मेरे साथ थे। मैं वहीं पर बैठ गया, मन ही मन यह निश्चय करके कि गुरुदेव की कृपा होगी तो ये महापुरुष अवश्य ही दर्शन देंगे। थोड़ी देर बाद उन्होंने उस व्यक्ति का नाम लेकर पुकारा। जब वह उनके पास गया तो उससे कहा, "जो महात्मा जी मुझसे मिलने आये हैं उन्हें तुम आदर से बिठाओ, मैं थोड़ी देर में आ रहा हूँ।" उस व्यक्ति के लिए भी यह एक आश्चर्य की बात थी। उसने आकर मुझसे कहा कि आप अवश्य ही कोई भाग्यवान पुरुष हैं क्योंकि इतने वर्षों में मुझे याद नहीं कि स्वामी जी ने कभी किसी से मिलने की बात कही हो, आप ही

प्रथम व्यक्ति हैं। मैं प्रतीक्षा करता रहा, घंटे बाद एक दिव्य मूर्ति छत से नीचे उतरी। वृद्धतम शरीर होता हुआ भी पूर्ण स्वस्थ और तेज युक्त था। चूड़ीदार पायजामा ऊपर से शेरवानी पहने, सिर पर पगड़ी, मस्तक पर त्रिपुण्ड, हाथ मे छड़ी लिए धीरे–2 जहाँ मैं बैठा था वहाँ आ गये, मैं तो देखता ही रह गया। उनकी वेशभूषा से तो कोई अनुमान नहीं लगा सकता था कि वे एक महायोगी और सन्यासी हैं। वे आकर मेरे पास ही बैठ गये, मैंने उन्हें उनका चरण स्पर्श करते हुए प्रणाम करना चाहा किन्तु उन्होंने मेरे हाथ पकड़ लिए, बड़े प्यार से पास बिठा लिया और पूछने लगे, "कहो, कैसे आए हो?" मैंने निवेदन किया–"प्रभो! मैं तो केवल दर्शन की ही लालसा लेकर आया था किन्तु अब मेरी कुछ जिज्ञासा हो गई है, विश्वास है आप अवश्य ही उसका समाधान करेंगे।" उनकी आज्ञा पाकर मैंने अपनी जिज्ञासा व्यक्त की। "भगवन्! आद्य गुरु शंकराचार्य जी ने लिखा है, "ब्रह्म सत्यं जगत् मिथ्या जीव ब्रह्मेति नापरः" अर्थात् ब्रह्म सत्य है, जगत् मिथ्या है, जीव ब्रह्म ही है उससे भिन्न और कुछ नहीं। इसमें ब्रह्म सत्य है, यह तो ठीक है, समझ में आ गया, जीव ब्रह्म से भिन्न नहीं, यह भी बात समझ में आ गई किन्तु जगत् मिथ्या शब्द का अर्थ समझ में नहीं आया क्योंकि किसी भी स्थिति में इस जगत् को मिथ्या नहीं कहा जा सकता। आचार्य का अनुभव, लेखन, भाषण, प्रचार तथा धर्म संस्थापन का कार्य यह सब कुछ तो जगत् की सीमा में ही आ जाता है। यदि जगत् मिथ्या है तो व्यक्ति का व्यक्तित्व भी जगत् का अंश होने के नाते मिथ्या हो जाएगा फिर उसके कथन की प्रमाणिकता ही कहाँ रह जाती है,

यही मेरी शंका है?

मेरे प्रश्न को सुन कर वे महापुरुष खूब हँसे और मुझसे कहा–क्या तुम मेरी परीक्षा लेना चाहते हो? मैंने कहा–नहीं प्रभो! मेरी जिज्ञासा है। उन्होंने कहा कि आद्याचार्य श्री ने जो कुछ कहा है वह परम सत्य है। योग की उच्चतम अवस्था में पहुँचने पर जहाँ ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय की त्रिपुटी समाप्त हो जाती है, वहाँ जगत् कहाँ रह जाता है? क्या तुमने इसका अनुभव नहीं किया है? फिर मुझसे इस विषय में क्यों पूछ रहे हो? मैं तुम्हें अच्छी प्रकार से जानता हूँ और तुम्हारे गुरुदेव को भी जानता हूँ। तुमने अभी तक साधना मे क्या कुछ किया है यह भी मुझे पता है, इसलिए जो कुछ तुम मुझसे पूछ रहे हो इस विषय में तुम्हें कुछ बताने की आवश्यकता नहीं।" मैंने कहा, "भगवन्! मैं तो आपका अपना अनुभव जानना चाहता था।" उन्होंने कहा, उस अवस्था विशेष में पहुँचने पर सबके एक से ही अनुभव होते हैं। जहाँ द्वैत समाप्त हो जाता है, वही परम सत्य है। व्यावहारिक जगत् में ही सारे क्रियाकलाप हुआ करते हैं। आचार्यश्री ने जो कुछ भी किया वह उसे व्यावहारिक सत्ता के रूप में मानते हैं। व्यावहारिक सत्ता कभी भी परम सत्ता की बाधक नहीं होती। सिद्धान्त रूप में कही जाने वाली बातें व्यवहारिक सत्य से नहीं, परम सत्य से सम्बन्धित होती हैं।" इस तथ्य को मुझे समझाते हुए उन्होंने कहा कि हर एक महापुरुष अपनी परम अनुभूति के रूप में ही सिद्धान्त की प्रतिष्ठा करता है लेकिन वह जन सामान्य की बुद्धि के लिए ग्राह्य नहीं होता। जैसे कि मैं एक आसन से छः महीने तक प्राण का अवरोध करके बैठ सकता हूँ। मेरे लिए तो यह सभव हैं किन्तु

सभी तो यह नहीं कर सकते। मेरी जिज्ञासा और बढ़ गई। मैंने उनसे योग से सम्बन्धित कुछ प्रश्न किए जिसमें उन्होंने कुछ का उत्तर दिया और कुछ को यह कह कर कि तुम इसे जानते हो, चुप हो गये। फिर कहा, अभी तुम्हें बहुत काम करना है केवल देश में ही नहीं, विदेशों में भी बहुत से लोग तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। जिस प्रकार से नरेन्द्र ने विदेशों में वैदिक धर्म और उपनिषदों का संदेश पहुँचाया, तुम्हें भी वैसा ही करना होगा। मैंने कौतुहलवश पूछा कि नरेन्द्र कौन है? उन्होंने कहा, भई बाद में उसे विवेकानन्द नाम मिला। वह लड़का बहुत ही बुद्धिमान, अच्छा साधक और विद्वान् था, तुम्हारी ही तरह उसकी भी बहुत ही प्रखर बुद्धि थी। उसके गुरु रामकृष्ण भी अच्छे सन्त थे। मैंने दोनों को ही कई बार देखा है। थोड़ी अवस्था में ही उसका शरीरान्त हो गया। मेरे विशेष आग्रह करने पर भी उन महापुरुष ने अपनी आयु के विषय में कुछ नहीं बताया। उनकी आँखों के अन्दर का सफेद भाग पूर्ण रूप से नीला हो गया था, इससे लगता था कि शरीर बहुत ही वृद्ध है। उन्होंने और भी कई महात्माओं के विषय में चर्चा की। अपने विषय में केवल इतना ही बताया कि मेरा शरीर दक्षिण भारत का है। कांचीपुरम के जगत्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी चन्द्रशेखराचार्य द्वारा दीक्षा ग्रहण की थी और अब तो बहुत वर्षों से इधर ही रहता हूँ, किसी से मिलता नहीं, किसी से बात नहीं करता, सैंकड़ों वर्ष बाद आज तुमसे बात किया हूँ। अब मैं तुम्हें कुछ देना चाहता हूँ, तुम मेरे पास रहो। प्रातःकाल मैं तुम्हें कुछ बताऊँगा।"

उन महापुरुष की कृपा का स्मरण कर आज भी श्रद्धा से

हृदय भर जाता है। दूसरे दिन प्रातःकाल सारस्वत मंत्र के साथ जो कुछ भी उन्होंने दिया उसका वर्णन लेखनी से नहीं हो सकता। सरल भाव में उन्होंने अंग्रेजों के शासन के पूर्व की आँखों देखी बात बताई। गोस्वामी तुलसीदास जी के विषय में पूछने पर उन्होंने कहा, मेरे से कुछ वर्ष पूर्व ही उनका शरीर छूट चुका था।

निश्चय ही वे एक महायोगी थे, पूर्ण पुरुष थे, उनके कृपा प्रसाद से मेरा जीवन धन्य हो गया। उनकी कृपा के साथ ही उन्होंने मुझसे कहा कि तुम एक महापुरुष के शिष्य हो इसलिए मैं तुम्हें अधिकारी समझ कर ही यह दे रहा हूँ। इसकी साधना करो, यह तुम्हें विश्व में प्रतिष्ठित करेगा। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि तुम मेरे शरीर के रहते हुए कभी भी, किसी से भी मेरा जिक्र नहीं करना, नहीं तो ठीक नही होगा। मैंने उनसे प्रार्थना की कि मेरे दो शिष्य हैं, वे आपका दर्शन करना चाहेंगे, यदि आज्ञा हो तो उन्हें भेज दूँ? उन्होंने मुस्कराते हुए स्वीकृति दे दी। उनके चरणों में बार–2 प्रणाम कर उनका कृपा प्रसाद प्राप्त कर मैं वापिस आ गया। बाद में प्रिय योगानंद और प्रिय धर्मनारायण को उनके दर्शनों के लिए भेजा। कुछ वर्षों पश्चात मुझे पता चला कि उन्होंने अपना शरीर छोड़ दिया है। कुछ अन्य वृद्धतम महात्माओं से उनके विषय में चर्चा करने पर यह ज्ञात हुआ कि वे महायोगी लगभग 300 वर्षों तक अपने पार्थिव शरीर में रहे। लण्डन में ईलिंग अस्पताल में बैठे हुए ध्यान में उन महापुरुष का आगमन और उनके द्वारा दिए गए सारस्वत मंत्र का संस्मरण एक अद्भुत घटना थी। संस्मरण के साथ ही वागीश्वरी देवी की कृपा से छंदोबद्ध विचार प्रवाहित होने लगे और पहले 'श्री हनुमत् हृदय

की रचना हुई, बाद में 'श्री चण्डिका शतक' की। करुणामयी की कृपा बनी रही तो 'शिव शतक' भी पूरा हो जाएगा। आगे वही जाने किस प्रकार से, कब, क्या लिखवा ले, क्या करवा ले!

इस 'चण्डिका शतक' में मेरी अब तक की समग्र अनुभूतियाँ जो कि तात्त्विक दृष्टि से प्रत्यक्षवत् भासित हैं, छन्दोबद्ध रूप से अभिव्यक्त कर दी गई हैं। भगवती के त्रिविध चरित्र और व्यक्तिगत जीवन में उनकी यथार्थता भी संकेत रूप से इसमें बता दी गई है। प्रथम चरित्र में भगवती परमेश्वरी ने परमेश्वर को विमोहित कर योग निद्रा में निमग्न कर रखा है। सृष्टि का प्रारम्भ लीलावशात् वे स्वयं करती हैं। ब्रह्मदेव की उत्पत्ति, मधु और कैटभ का आविर्भाव, ब्रह्मदेव का उनसे भयभीत हो रक्षक की खोज और भगवती को देख रक्षार्थ श्रीमन्नारायण को योगनिद्रा से मुक्त कर उन्हें जागृत करने की प्रार्थना तथा श्री नारायण द्वारा मधु–कैटभ का वध; यह सब कुछ यथार्थतः प्रत्येक मनुष्य के अपने जीवन की ही कहानी है। इस चरित्र में व्यक्तिगत जीवन को काम और क्रोध, गीता के तीसरे अध्याय में भगवान् ने जिसे मनुष्य का महान् शत्रु घोषित किया है, के विनाश की विधि का रहस्यमय रूप में उपदेश है। इसका विस्तृत रूप से वर्णन जिज्ञासुजनों के लिए फिर कभी किया जाएगा।

दूसरे चरित्र में महिषासुर वध की कथा है, इसमें सामाजिक जीवन में आने वाली बाधाओं के मूल कारण की ओर संकेत किया गया है और उन समस्त आपदाओं से मानव समाज को विमुक्त होने की सुन्दर विधि का निर्देश भी किया गया है। महिषासुर केवल मानव लोक का ही नहीं, समस्त देवलोकों का विजेता है।

अपने–2 स्तर पर सभी देव उससे युद्ध करके पराजित हो चुके हैं। यहाँ तक कि देव, मुनि, मानवों की पुकार सुनकर त्रिदेव भी किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं। उस अवस्था में एक अद्भुत घटना घटित होती है। सभी देवों की तेजोमयी शक्ति आकाशमंडल में सम्मिलित हो ज्योतिपुंज रूप में प्रकट होती है और देखते ही देखते वह ज्योतिपुंज महाशक्ति परमेश्वरी दुर्गा के रूप मे साकार हो जाती है। देवता, मुनि तथा मनुष्यों को अभय वर प्रदान करती हुई वह महिषासुर के वध मे प्रवृत्त होती है। समस्त आसुरी सेना के साथ महिषासुर का वध करती है और त्रिलोक को अभय वर प्रदान करती है।

आश्चर्य की बात है कि हिन्दू समाज सहस्राब्दियों से भगवती के इस पावन चरित्र का पाठ करता आ रहा है और अपने दु:ख, दारिद्र्य, परतंत्रता तथा अनेक प्रकार की विपत्तियों को दूर करने के लिए भगवती की आराधना करता आ रहा है किन्तु वाह रे महामाया! तेरी महिमा कितनी अद्भुत है कि हिन्दू समाज दुर्गासप्तशती में प्रतिपादित इस सामान्य नियम को भी नहीं समझ पाया कि पराशक्ति का आविर्भाव एकाकी में नही अपितु संगठन में है। "संघे शक्तिः" यह सूक्ति सनातन है। इसका उद्घोष भारत के महापुरुष समय–2 पर करते रहे हैं। भगवान् बुद्ध के उद्घोष में 'संघं शरणं गच्छामि' का प्रमुख स्थान रहा है किन्तु दुर्भाग्यशाली हिन्दू समाज इस सामान्य सिद्धान्त को भी नहीं समझ पाया और शताब्दियों तक दुर्गा का पाठ करते हुए भी परतंत्रता का जीवन जीता रहा। संगठन में ही शक्ति है चाहे वह परिवार हो, जाति हो, समाज हो वा राष्ट्र हो। जहाँ संगठन है

वहीं विजय है, विभूति है। भगवती के द्वितीय चरित्र से हमें यही सीख मिलती है। यह याद रहे कि भगवती का चरित्र भोग और मोक्ष दोनों का प्रदाता है। पराशक्ति ही सर्वभूत में अभिव्यक्त है और इस अभिव्यक्ति का प्रयोजन जीवों के लिए भोग और अपवर्ग प्रदान करना है। इसी का विवेचन भगवती के त्रिविध चरित्र में किया गया है।

तृतीय चरित्र उत्तर चरित्र कहा जाता है जिसमें धूम्रकेतू, चंड, मुण्ड, रक्तबीज, निशुम्भ और शुंभ, इन छः असुरों के वध की कथा है, साथ ही इनके असंख्य दैत्यों के विनाश का भी उल्लेख है। यह उत्तर चरित्र महासरस्वती का है। यह महासरस्वती जगदम्बा गौरी के शरीर से उत्पन्न होती है और महासरस्वती को ही अम्बिका के रूप में सम्बोधित किया गया है, इसी से चण्डिका का आविर्भाव होता है। काली का आविर्भाव भी इसी अम्बिका से होता है जो चामुंडा कही जाती है। इस चण्डिका शतक में भगवती के उत्तर चरित्र का सार रूप से वर्णन किया गया है। इस चरित्र के मुख्य हेतु शुंभ और निशुम्भ हैं, अन्य सभी दैत्य इन्हीं के सहायक हैं। शुम्भ और निशुम्भ, ये दोनों मोह और मद के ही मूर्त रूप हैं। पराम्बा के सौन्दर्य की महिमा सुन कर विमुग्ध हो जाना और उसे प्राप्त करने की चाह लेकर दूत भेजना, उत्तर में पराम्बा का अपने दर्प को चूर कर विजयी हुए पुरुष को ही पति रूप में वरण करने की प्रतिज्ञा करना और इसके उत्तर में मदान्ध असुरों का देवी को बल पूर्वक ग्रहण करने की चेष्टा उनके मोह और मद के साकार रूप होने का संकेत करती है। इस युद्ध में भगवती के कई अद्‌भुत चरित्र हैं जिनमें विशेषकर देवताओं को सभीत देख

एक से अनन्त शक्ति रूपों का प्राकट्य और दूसरा शुम्भ के उपालम्भ को सुन कर अनेक शक्ति स्वरूपों का एक में विलीन हो जाना, ये दोनों ही घटनायें परमेश्वरी की अद्‌भुत लीला का अवबोधन कराती हैं। रक्तबीज वध में काली का कृत्य भी अद्‌भुत है; ये सभी चरित्र प्रकारान्तर से व्यष्टि और समष्टि जीवन में विजय, विभूति को प्राप्त करने की विधि का ही अवबोधन कराते हैं। साधक को सतत सावधानी से इसका मनन कर तदनुसार साधन का अवलम्बन लेना चाहिए।

सरस्वती को ही विधात्री कहते हैं। वह सृष्टि के रचयिता ब्रह्मदेव की शक्ति कही जाती है। ज्ञान की जननी होने से वह बुद्धि स्वरूपा है। शौर्य–शक्ति चण्डिका और कालात्मिका–शक्ति काली, ये दोनों ही उसी से आविर्भूत होती हैं और इन्हीं के द्वारा मोह, मद, मत्सर, अहंकार, काम और क्रोध आदि शत्रुओं का संहार किया जाता है। यह बुद्धि स्वरूपा बोधात्मिका शक्ति पराम्बा परमेश्वरी का ही व्यष्टि रूप में आविर्भूत अंश है। इस सम्बन्ध में परमेश्वरी की महिमा का वर्णन करते हुए स्पष्ट रूप में कहा गया है–"व्यष्टि रूप बुद्धि के स्वरूप में विभासि रही, कारण समष्टि रूप तू ही भवदम्बिका।" अभिप्राय यह कि समष्टि और व्यष्टि दोनों ही रूपों में बोधात्मिका शक्ति एक ही है। वही महासरस्वती के नाम से अभिहित होती है। विशेष रूप से उत्तर चरित्र जगत् और जीव दोनों से सम्बन्धित होने के नाते, इसका चिन्तन–मनन साधकों के लिए विशेष कल्याणकारी है; इसलिए इस शतक में इसका विशेष रूप से वर्णन किया गया है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इसके नित्य के पाठ तथा चिन्तन और मनन से जिज्ञासु

साधक करुणामयी की करुणा का भाजन बनेंगे और साधना में भी सफलता प्राप्त करेंगे। यह "श्री चण्डिका शतक" कवि की कल्पना का प्रकाश नहीं करुणामयी की करुणा का प्रसाद है। विश्वास है कि यह अनुभूत सत्य का संग्रह सुधी साधकों तथा जिज्ञासुजनों के लिए शक्ति की आराधना में सत्यान्वेषण हेतु प्रेरणाप्रद बनेगा।

इस पुस्तक के प्रथम संस्करण की छपाई का कार्य अपने आश्रम की प्रेस में ही किया गया तथा इसका सारा आर्थिक वहन मेरे प्रिय शिष्य विजय अग्रवाल ने अपनी पू॰ माता जी स्वर्गीया श्रीमती मोहन देवी की पुण्य स्मृति में किया था। अब यह द्वितीय संस्करण माँ के श्रद्धालुओं के विशेष आग्रह पर दिव्यालोक प्रकाशन द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है। करुणामयी भगवती से प्रार्थना है कि वह अपनी करुणा से सभी को शक्ति, भक्ति और सेवा की सामर्थ्य प्रदान कर अपने दिव्य पथ का अधिकारी बनावे जिससे ये सभी स्वयं के जीवन को सार्थक करते हुए मां की अहैतुकी अनुकम्पा के सदैव भाजन बने रहें। अनन्त मंगल–कामनाओ सहित सभी का हितेच्छु –

–विश्वात्मा बावरा

ॐ गं गणाधिपतये नमः

श्री चण्डिका शतक

ॐ नमश्चण्डिकायै

अक्षर अपार मति गति सचराचर की।
सिंधुर वदन गणनायक को ध्याऊँ मैं।।
प्रणव प्रकाश रूप भूप सब देवन्ह को।
शिवा सुत स्वामी दया दृष्टि तव पाऊँ मैं।।
सिद्धि बुद्धि दाता ज्ञान गुण के विधाता देव।
सर्व उर ज्ञाता काह कहि के सुनाऊँ मैं।।
बार बार बावरा विनय कर जोरि करै।
देऊ वरदान निज मातु गुण गाऊँ मैं।।1 ।।

हँस पर विराजै कर राजै वर वीणा वेद।
शुभ्र वस्त्र छाजै अंग मेरी मातु शारदे।।
जगत की धातृ बुद्धि विद्या की विधात्री देवि।
दया दृष्टि तेरी भव सिंधु से उबार दे।।
नवरस सार भावधारा काव्य रूप धारि।
प्रतिभा प्रसारि छंद बंध विस्तार दे।।
बावरे की ओर करि करुणा की कोर अंब।
तेरो गुणगान चाहौं शब्द को संवार दे।।2।।

प्रकृति परेश की प्रकाशिका परावर की।
प्रमा अप्रमेय की विराजति प्रमोद में।।
त्रिगुण महान की प्रगटि मातु पल मांही।
भुवन अनन्त रचि देत है विनोद में।।
विधि हरिहर देव दनुज मनुज नाग।
जीव सचराचर संभारे निज गोद में।।
बावरा विलोकि के विलास परमेश्वरी को।
करत प्रणाम सदा रहत आमोद में ।।3।।

कौन भांति शून्य से प्रगटि सचराचर को।
पालत हरत अंब भेद यह जानै कौन।।
लोकप त्रिदेव देव लीला के विलास तव।
अगम अपार गति मति पहिचानै कौन।।
वाणी वेदपाणि लखि चक्क चित मौन होत।
महिमा महान तेरी कीरति बखानै कौन।।
बावरा विभोर तव कौतुक विलोकि अंब।
जानत सुजान न अजान अनुमानै कौन ।।4।।

एक से अनेकता की चाह लखि प्रियतम की।
पल में प्रमोद हेतु जगत प्रसारती।।
प्रभु के प्रकाश में प्रसूति सचराचर को।
ता हित अनन्त भांति मूरति संवारती।।
शक्ति है अभिन्ना पर प्रगटि प्रभिन्ना रूप।
भिन्न भिन्न भावना के रस विस्तारती।।
अमित नक्षत्र दीप साजि नभ थाल मांही।
बावरे प्राणेश की है आरती उतारती।।5।।

करुणा की खानि महारानी सब देवन्ह की।
सर्व सुख दानि दिव्य धाम में विराजती।।
उमा रमा वाणी शूलपाणी हरि वेद पाणी।
विविध स्वरूप धारि साज सब साजती।।
शक्ति आह्लादिनी निनादिनी अनाहत की।
एक अव्यक्त को अनेक में विभाजती।।
बावरा निहाल देखि सुषमा अपार अंब।
मति गतिहीन रति कोटि छ़वि लाजती।।6।।

ऐहो जगदम्ब तेरी महिमा अपार अंब।
वेद कहाँ जानै नेति नेति कही गाई है।।
धूल से ही फूल को खिला के लहरा के जग।
धूल में मिला दे यह तेरी प्रभुताई है।।
चंचल चरण हो अचंचल चलत सदा।
गति गतिहीन में सुगति दर्शाई है।।
बावरा विचित्र चित्र रचि के मिटाई देत।
कैसी अति निठुर हमारी तुम़ माई है।।7।।

परम विचित्र तेरी रचना विलोकि अंब।
समुझि न पावत थकित होत माथ है।।
शून्य से पवन ताते पावक प्रगट करि।
पावक से नभ में प्रगट होत पाथ है।।
पाथ से कमल तामे विधि को प्रकाश भयो।
ताहि हतिबे को मधु कैटभ को साथ है।।
बावरा अबोध बोध तरनि तिमिर तोम।
सांचि जिय कहत तिहारो सब हाथ है।।8।।

माया परब्रह्म की प्रकृति पुरुषोत्तम की।
शक्ति महाशिव की तू सांख्य की प्रधान है।।
काली कमलासना श्री सरस्वती इला मही।
श्रुति बुद्धि विद्या मां अनन्त अभिधान हैं।।
पिय के विलास हेतु हिय में हुलास लिए।
करती अनेक भाव रस को विधान है।।
बावरे विरूपा विश्वरूपा भुवनेश्वरीं को।
मानै है निहारे मातु करुणानिधान है।।9।।

विधि भयो व्याकुल विलोकि मधु कैटभ को।
हारि हिय आरत पुकार्‌यो मातु जल में।।
दया दरशायी योग निद्रा से जगाई प्रभु।
विपति बिरंचि को निवारि दियो पल में।।
काम अरु क्रोध क्रूर ताहु से कुटिल अति।
रैन दिन जीव को जलाय रह्यो थल में।।
बावरे की आह भरि बिनती सुनहु अंब।
करत गुहार पर्‌यो मोह दलदल में।।10।।

तेरी एक दृष्टि सब सृष्टि को सजाइ देत।
करुणा तुम्हारी वाकी पालना करति है।।
द्वन्द्व को पसारि विस्तारी देव दानव को।
तासु उर शासन की वासना भरति है।।
राग औ विराग युद्ध प्रीति की प्रवृत्ति जंग।
जीव में प्रगटि ताकी प्रतिभा हरति है।।
बावरे करम काल जाल बुन्यो आपही ने।
तामे पर्‌यो लाल तव कैसे उद्धरति है।।11।।

करम धरम भयो जीव के जबाल जाल।
ताहि को कुफल जग सांसति सहत हौं।।
पल में असंभव को संभव बनाई देत।
तेरी प्रभुताई सुनि ढाढ़स लहत हौं।।
मातु वरदायिनी की महिमा समुझि जिय।
मानि अधिकार कछु ताहि ते कहत हौं।।
बावरा जगत जीव अंक में तुम्हारे अंब।
चूक कहाँ कैसे भई जानिबो चहत हौं।।12।।

महिषासुर मारिके संभारि सुरलोकन्ह को।
देव मुनि अभय बनाई सुख दीन्हो है।।
भक्त हित हेतु मातु करी थी प्रतिज्ञा एक।
भूलि गई काह ये प्रभाव कलि चीन्हो है।।
जब जब बाधा दुष्ट दानव करेंगे यहाँ।
आई के निवारिबो को प्रण तुम लीन्हो है।।
बार बार बावरे की आरत पुकार सुनि।
आई नहीं अंब तू विलम्ब कहाँ कीन्हो है।।13।।

हाहाकार भयो तिहुँ लोक त्राहि त्राहि कियो।
त्रास महिषासुर को देखि तुम मौन थी।।
बार बार देव मुनि आरत पुकार्‌यो तोहि।
सिंह पै सवार युद्ध हेतु करि गौन थी।।
असुर संहारि के संवारि सुरलोकन्ह को।
दियो अभय दान तुम दाती सुख भौन थी।।
बावरे अजान को है जानिबे की चाह अंब।
महिष स्वरूप लड़ी शक्ति वह कौन थी।।14।।

करुण पुकार सुनि धाई के उठाई अंक।
हिय लपटाई सब ताप हरि लेत है।।
भय को भगाई के बिठाई निज गोंद मांहि।
अमिय पिआई बहु भांति सुख देत है।।
ममता की मूरति संवारि सुत सूरति को।
बार बार सीख देइ करत सचेत है।।
बावरे स्वभाव यह अंशभूत मातन्हि को।
तुम तो जगत मातु करुणा निकेत है।।15।।

हौं तो मतिहीन अंब अमित कषाय लीन।
दया दृष्टि फेरि के पुनीत मोहि करि ले।।
जननी जनमि सदा शिशु को संवारि देत।
ऐसे जग रीति देखि ताहि चित्त धरि ले।।
दीन की दशा निहारि प्रभुता बिसारि निज।
अब तो कठोर उर करुणा से भरि ले।।
बार बार बावरा विनय परि पांय करे।
मातु कमलासना तू वासना को हरि ले।।16।।

परम प्रकाश में निवास तम को निहारि।
भयो भ्रम दूरि मिट्यो मन को विषाद है।।
करम धरम सुख सम्पत्ति विपति सब।
मोहबस बन्यो जड़ जीव को फसाद है।।
तेरो यह खेल भयो जेल सचराचर को।
समुझि अगम गति होत अवसाद है।।
बावरा विभोर जग भेद में अभेद लखि।
दयामयी मातु तेरी दया का प्रसाद है।।17।।

तू ही अव्यक्त अभिव्यक्त ह्वै विभक्त होत।
चेतन अचेतन के भेद में विभासती।।
चेतन अखंड खंड भाव कै अचेतन में।
त्रिगुण प्रसारि ताते महत प्रकाशती।।
बुद्धि से अहं तासो प्रबल प्रतापी मन।
इन्द्रिय दशक पंच विषय विकासती।।
भूत महाभूत से प्रभूत वेशधारी अंब।
बावरे करमकाल विश्व रूप शासती।।18।।

कोऊ कहै असत से सत को प्रकाश भयो।
कोऊ कहै सत से असत सत होत है।।
कोऊ कहै तम से प्रगट तेज पुंज़ होत।
कोऊ कहै तेज घन तिमिर को स्रोत है।।
कोऊ कहै चेतन में जड़ को आभास होत।
कोऊ कहै जड़ में चेतन ओतप्रोत है।।
बावरा मगन लखि अलख स्वरूप अंब।
मूढ़ कहा जाने जग तेरी एक जोत है।।19।।

एक ओर तम को महिष रूप में सजाई।
दूजी ओर जोति रूप आपु आई रण में।।
एक ओर दुर्गुण समूह यातुधान दल।
दूजी ओर सत को सँवारी देवगण में।।
युद्ध भयो झपटि दपटि रणक्रीड़ा करि।
रम्भसुत सकुल मिटाई दियो क्षण में।।
बावरा चकित सुनि चरित विचित्र अंब।
चाहत शरण नित तुमरे चरण में।।20।।

तेरे ही प्रकाश में प्रभात होत जीवन को।
तेरी छाँव पाइके अहं मम जागहीं।।
तू ही एक बीज से अनेक उपजाई देत।
बावरो बनाई जीव जग अनुरागहीं।।
तुमरी प्रभा में सत असत को भान होत।
मोह मद विषय विलास जन त्यागहीं।।
करुणा की ज्योति हर उर में जगादे अंब।
तुमरे प्रताप ताप भेद भ्रम भागहीं।।21।।

त्रिगुण अचेतन से चित्त को बनाई अंब।
चेतना जगाई तामें बोध भरि देत है।।
बुद्धि को विलास मैं मोर को प्रकाश करि।
ताहि बीच ममता को मान जरि देत है।।
एक में अनेक भाँति मूरति उकारि तापै।
भिन्न भिन्न सूरति को नाम धरि देत है।।
बावरे अनूप रूप जगत सजाई मातु।
पिय को रिझाई पुनि ताहि हरि लेत है।।22।।

दानव सँहारी देव विपति निवारि दियो।
सुबस बसाई लियो अपनी शरण में।।
पाहि कही बारेक पुकारि महतारी तोहि।
लाई न विलम्ब ताको संकट हरण में।।
साँसति सहत सब सुवन तिहारो अंब।
करत अबेर काहे करुणा करण में।।
ऐहो परमेश्वरी महेश्वरी वागेश्वरी मां।
कोटिन्ह नमन नित तुमरे चरण में।।23।।

खेल है तिहारो महामेल जग जीवन को।
चित्र से विचित्र बन्यो विविध वरण में।।
वेद नित गावत बतावत पुराण सब।
आपुहि विराजै अंब कारण करण में।।
बावरो मलीन मतिहीन अतिदीन जन।
लहत सुठाँव सदा तुम्हरी शरण में।।
मातु सर्वेश्वरी रसेश्वरी ज्ञानेश्वरी को।
कोटिन्ह नमन नित पावन चरण में।।24।।

जननि जनम से है चाह तेरे आँचल की।
दूजो विश्वास नहीं तारन तरन में।।
एक ही धरम व्रत नियम हमारो अंब।
चित्त हो निरत नित्य तुम्हरी शरण में।।
दयादृष्टि डारि सब करम कषाय टारि।
स्नेह से उठाई लेऊ अपने करन्ह में।।
ऐहो करुणेश्वरी विश्वेश्वरी सुरेश्वरी मां।
बावरा नमत कोटि पावन चरण में।।25।।

मातु हौं अबोध बोध तन को तनिक नाहिं।
मन को प्रबोध कहाँ धारणा धरन में।।
शासत विकार षट् निपट अनाड़ी जानि।
होत न सहाय देव मंगल करन में।।
बावरा विकल कल पावत न एको पल।
करी क्यों विलम्ब अंब अवढर ढरन में।।
मातु भुवनेश्वरी कामेश्वरी विंध्येश्वरी को।
करत प्रणाम कोटि पावन चरन में।।26।।

मानी अधिकार निज लघुता बिसारि नित।
अति सुख पावै पूत मातु से लरन में।।
निदरि निहारि झिझकारि कै हटाई देत।
तऊ सुत धाई छिपि जाई अचरन में।।
बावरे पीयूष को पीयूष एक आखर है।
मां सम न दूजो मंत्र चौसठ वरन में।।
मेरी मातेश्वरी सदेश्वरी चिदेश्वरी को।
कोटिन्ह प्रणाम सदा पावन चरन में।।27।।

अवगुण अनेक देखि कुटिल कुचालि जानि।
राखत सँभारि ताको पोषण करति है।।
अधम अधीन सब भाँति से करमहीन।
ऐसेऊ कपूतन्ह की वेदना हरति है।।
पल न लगत घोर पातकी पुनीत होत।
करुणा की कोर तेरी जाँहि पै परति है।।
बावरे बराक को निहारि के निहाल करु।
तेरी दया दृष्टि में पीयूष बरसति है।।28।।

मोह मद शुम्भ औ निशुम्भ को स्वरूप धारि।
जीत लियो लोक तिहुँ दनुज महान थे।।
देवगण सभय भगाने निज धाम तजि।
होके असहाय मेरु कंदरा छिपान थे।।
त्राहि त्राहि कियो नरलोक नागलोक सब।
धायो नहीं त्राण को त्रिदेव विद्यमान थे।।
बावरे विचारि सुर व्याकुल निहारि जग।
आरत पुकार्‌यो अंब तोहि धरि ध्यान थे।।29।।

होई के अधीर लोकपाल सुरसंघ लिए।
मघवा महान आई तुम्हरी शरन में॥
कह्यो कर जोरि पराशक्ति अपराजिता से।
कोटिन्ह नमन करि मंगल चरन में॥
पाहि जगदीश्वरी महेश्वरी प्रणत पाहि।
अंब हो सहाय जन पीर के हरन में॥
बावरे अनाथ सुर जानि के सनाथ करु।
लाई क्यों विलम्ब देव दारिद दरन में॥30॥

तू ही विश्वमाया बनी काया परमेश्वर की।
चेतना स्वरूपा बुद्धि बोध विस्तारती॥
निद्रा क्षुधा छाया शक्ति विविध स्वरूप धारि।
तृष्णा बढ़ाई संसार को पसारती॥
क्षान्ति जाति लज्जा शान्ति सुख की निधान अंब।
श्रद्धा से सजाय उर कान्ति से सँवारती॥
लक्ष्मी अलक्षिका प्रवृत्ति वृत्ति रूप तेरो।
बावरे अनन्त भान्ति सृष्टि को शृंगारती॥31॥

मां तुम अनन्त तेरो अंत नहीं पावे वेद।
नेति नेति कहत थकित मौन धारी है।।
स्मृति जगाई दया भाव हिय सरसाई।
तुष्टि भरि देत तू उदार महतारी है।।
मातृ ह्वै चराचर की भ्रान्ति उपजाई देवि।
इन्द्रिय समूह भूत भावना प्रसारी है।।
बावरे अचित्त चित्त रूप परमेश्वरी को।
व्यापि रही सर्व मांहि सबसें नियारी है।।32।।

मातु सदा आरत पुकार सुनि देवन्ह की।
करत सँभार धाई विपति विदारती।।
परी भीर भारी टेर सुनहु हमारी अंब।
आश्रित अनाथन्ह को संकट निवारती।।
अबुध अनारी पर्‍यो पायन तिहारी आय।
देखि के उठाई निज अंक ले सँवारती।।
दानव को दंड देई दास पे दया दिखाई।
बावरे विश्वेश्वरी माँ दुहुँ भाँति तारती।।33।।

चिन्मय विलास में अनन्त जीव जनि देत।
ताको चारि आकर में तनु विस्तारती।।
चेतन से जड़ जड़ चेतन स्वरूप माहिं।
प्रगटि परावरी प्रपंच को पसारती।।
देवासुर भाव में विभाव देखि शस्त्रधारी।
दनुज संहारी अंब सुरन्ह सँभारती।।
युद्ध और प्यार नित्य तेरो खिलवार मातु।
बावरे विचित्र चित्र रचि के बिगारती।।34।।

अदिति अंखड देव दिति खंड दानव को।
विरचि विचित्र भाँति पालति हरति है।।
विद्या औ अविद्या कार्य कारण विविध रूप।
व्यष्टि औ समष्टि विश्व रूप विहरति है।।
बावरे विधात्री अंब धातृ जन जीवन को।
भुक्ति मुक्ति रूपा तू ही तारति तरति है।।
मातु महाकाश में प्रकाश रूप व्यापि जग।
राखि निज तंत्र में स्वतंत्र विचरति है।।35।।

सत्य ऋता ब्रह्म की विभूति भूति भेदमयी।
ज्योति चैतन्य की तू जगत प्रकाशिका।।
शान्ति महाशिव की तू कांति कमलासना है।
भारती विरंचि की तू शब्द की प्रभासिका।।
महानिशा मुनि की मनीषा ईशा ईश्वर की।
नाद ब्रह्मवादिनी तू मातृका सुकाशिका।।
बावरे विशुद्धा है प्रबुद्धा मातु बोधमयी।
शारदा सुदिव्या दिव्य भावना विकासिका।।36।।

नाम हैं अनेक सत्त्व एक अखिलेश्वरी को।
व्यापि रही सर्व माँहि सर्व रूप धारि के।।
मातु हौं सभीत भीत हेतु तुम जानति हो।
कौतुक करति सत्य असत प्रसारि के।।
शरण हौं तिहारी महतारी उर क्षोभ भारी।
सुतन्ह संभारि लेहु स्नेह से निहारि के।।
बावरे सुरेश सुर आरत पुकारत हैं।
करी क्यों विलम्ब अंब प्रण को बिसारि के।।37।।

आरत अधीर ह्वै पुकार्‌यो देव वृंद जब।
देर नहीं लाई मातु करुणा करन में॥
परम अनूप रूप धारि के प्रगट भई।
सुषमा अपार छवि छाई त्रिभुवन में॥
देवगण चकित विलोकि विश्व मोहिनी को।
महामोह व्यापि गयो दानव वरन्ह में॥
बावरा समुझि सुनि कौतुक तिहारो मातु।
करत प्रणाम कोटि कोटिन्ह चरण में॥38॥

रूप की निधान मातु सुषमा महान सुनि।
शुम्भ औ निशुम्भ भयो आकुल वरन को॥
महाकाल प्रेरित मुदित यातुधान मानो।
आकुल शलभ दीप शिखा पे परन को॥
मोह मद ग्रसित त्रसित मूढ़ कामना से।
भेज्यो खल दूत महामाया के हरन को॥
बावरे अधम जातुधान न मरम जानें।
चाहत हैं ज्वाल माल उर पै धरन को ॥39॥

असुराधिपति को पठायो दूत आई देख्यो।
मानों महाछवि नारी रूप में विराजती।।
सेवत सुरेश्वरी दिगेश्वरी चंवर धारि।
सुषमा की किंकरी ह्वै कोटि रति लाजती।।
देववृन्द नभ से निहारें अति आतुर ह्वै।
जा हित सुरेश्वरी अनेक साज साजती।।
बावरे निशुम्भ दूत जाई के संदेशो कह्यो।
सुनि मुस्काई मातु मंद मंद गाजती।।40।।

दूत कह्यो देवी शुम्भपति सचराचर को।
त्रिभुवन जयी जगदीश पद धारी है।।
भोक्ता भयो है सब देव यज्ञ भागन को।
सुरासुर स्वामी निज कीरति प्रसारी है।।
जेते भोग्य तत्त्व हैं त्रिलोकी के रतन सारे
असुंराधिपति आज ताके अधिकारी है।।
बावरे जगत माँहि तुम सो न आन तिय।
रतन अधीश्वरी तू चाहना तुम्हारी है।।41।।

यातुधानपति की है चाह नीकी जानति हौं।
फीकी लगे मोहि ताको पूरण करन में।।
त्यागि न सकति ताहि बावरे स्वभाव बस।
कीन्हीं है प्रतिज्ञा एक पति के वरन में।।
वीर हो महान बलवान मो समान सूर।
करे दर्प चूर मेरो जीति मोहि रन में।।
विश्व के अधार बने मेरो भरतार सोई।
अर्पण करूँगी सत्त्व ताहि के चरन में।।42।।

प्रबला परम शक्ति अबला के रूप माँहि।
देखि के हहाहिं मूढ़ मर्म नहिं जानहीं।।
कहाँ दानवेन्द्र सम सुभट भुवन माहिं।
नारि सुकुमारी कहाँ मन अनुमानहीं।।
हारे समुझाई शुम्भ प्रभुता सुनाई बहु।
मातु मुस्काई निज प्रण को बखानहीं।।
बावरे रिसाई मानों मृत्यु को बुलाइबे को।
आयसु सुनायो नारि केस गहि आनहीं।।43।।

चल्यो धूम्रलोचन विशाल साथ वाहिनी ले।
आयो जहाँ बैठि अंब गिरि के उछंग में।।
अबला एकाकी देखि जानी असहाय मूढ़।
मद भरी बातें करें युद्ध के उमंग में।।
शान्त मुस्काती देवी केहरि निकट ठाढ़ो।
लखि यातुधान निज माया के तरंग में।।
बावरे विलोकि के अशंक जगदम्बिका को।
भयो उन्मत्त रोष व्याप्यो अंग अंग में।।44।।

तमकि तपाक से सुनाई के आदेश मूढ़।
दियो निर्देश निज संग में चलन को।।
मान की मलैंगे गहि केश लै चलैंगे तोहि।
पल न लगैंगे तेरे दर्प के दलन को।।
देवी कह्यो देर क्यों करत मोहि आई गहु।
धाये यातुधान मौत ज्वाला में जलन को।।
बावरे हुंकार मारि सेनप संहार कियो।
केहरि विदार्यो धारि फारि के खलन को।।45।।

सबल सदल गति सुनि धूम्रलोचन की।
कोपि शुम्भं चंड मुंड दोऊ बोलि लीन्हो है।।
सेन साजि जाहु बांधि लाऊ हति केसरी को।
देखु कौन नारी असुरारि मद भीन्यो है।।
धाय लै धारि देखि सिंह पै सवार देवी।
मंद मुस्काई के त्रिलोकीं बस कीन्हो है।।
बावरे विचारि बंक भृकुटी निहारि अंब।
कालमयी कालिका प्रगट करि दीन्हो है।।46।।

काली विकराल काल मूरति कराल अति।
गहि खड़ग पाश युद्ध भूमि में विराजती।।
रूप है भयंकर प्रलयंकर को वेशधारि।
तनु कंकाल मुंडमाल कंठ साजती।।
आनन विशाल लाल रसना हिलाय रही।
करी अट्टहास घोर बार बार गाजती।।
बावरे प्रचंड रूप धारि रणचंडी मां।
आयुध अनेक लै अनेक भाँति बाजती।।47।।

काहु को पकड़ि तोरी मुंड रणरुंड पर्यो।
काहु को उठाई मुख बाइ खाइ जात है।।
यातुधान सुभट प्रहार अस्त्र शस्त्र करें।
धाई गहि ताहिं ले चबैना ज्यों चबात है।।
बावरे सघन बन असुर समूह मानो।
कालिका के कोपानल माँहि जलिजात है।।
रौद्र रस अद्‌भुत वीभत्स से सजाइ वीर।
करे रणक्रीड़ा देखि चित्त चकियात है।।48।।

दानव दल दलि के गरजि अट्टहास करि।
धाई चंड केश गहि खंड धारि लीन्हो है।।
मारिके हुंकार शीश धड़ से उतारि लियो।
मुंड देखि धायो गहि तासु वध कीन्हो है।।
रणमत्त काली काटि शीश महापशुओं के।
लाई जगदम्बिका को भेंट करि दीन्हो है।।
बावरे मुदित मातु चंडिका विहंसि बोली।
देवी चामुंडा के भुवन यश भीनो है।।49।।

चिन्तन करत चित्त तेरे रणकौशल को।
अद्भुत स्वरूप मातु श्यामल वरण है।।
काली काल कलना की आदि मध्य अंत तू है।
सहज विलास तेरो सृष्टि कै हरण है।।
बावरे अरूपा विकटानन विरूपा अंब।
सहस नयन मुख बाहु औ चरण है।।
अस्त्र शस्त्र धारि रणभूमि में विराजति है।
मातु चामुंडा तू ही दीन को शरण है।।50।।

मातु जगदम्बिका के पावन चरण मांहि।
पापी पशु चंड मुंड दोऊ बलि ह्वै गयो।।
हारि हिय हहरि सभीत शेष सैनिक जो।
प्राण ले पराने यातुधानपति पै गयो।।
कह्यो अति विकट चरित्र रण चंडिका के।
शुम्भ सुनि कोप्यो जनु आगि घृत च्वै गयो।।
बावरे हंकारि महा सेनप सजाई सेन।
युद्ध भूमि चलै को आदेश ताहि दे गयो।।51।।

यूथप अनेक बहुभांति रण साज साजि।
वाहिनी विशाल साथ चले जहँ कालिका।।
धाई धरु बांधि मारु पकरि पछारु ताहि।
करत कोलाहल लहराई खंड ढालिका।।
नारी है न आन महतारी तिहुँ लोकन्ह की।
ताहि नहीं जानै मूढ़ परे मोह जालिका।।
बावरे निहारि यातुधान धारि कोप करि।
घोर अट्टहास करि गाज्यो खल घालिका।।52।।

उदायुध, कंब, कोटिवीर्य, धौम्र कालक सो।
दौरहृद, मौर्य, कालकेय जो प्रधान थे।।
कोटि भट–सुभट महाभट को साथ लिए।
वीर रणधीर युद्धकला में सुजान थे।।
क्रूर शाही शुम्भ को आदेश पाइ शस्त्र साजि।
रणमदमत्त ठाढ़े युद्ध मैदान थे।।
चंडी महाकाली संग सिंह बलशाली देखि।
बावरे सकोपि धाई घेरे यातुधान थे।।53।।

पाई अनुशासन सुभट असुराधिप को।
साजि चतुरंगिनी बजाई घेरे आई कै।।
काली सिंह साथ लिए चंडिका विराजे मध्य।
करे अट्टहास घोर घंटा घहराई कै।।
बार बार केहरि गरजि महानाद करै।
फट्यो आकाश मानो प्रलय नियराई कै।।
बावरे त्रिदेव देवपति देव देखि रहे।
करैं जय जयकार मातु महिमा सुनाई कै।।54।।

देखि बहु वाहिनी विपुल वीर यातुधान।
सभय निहारि सुर मातु अपराजिता।।
प्रकटी त्रिदेव लोकपाल सुरपाल शक्ति।
सकल साकार रूप अस्त्र शस्त्र साजिता।।
भिन्न देव वेश भिन्न वाहन सवार हुई।
आइ रणभूमि जहाँ अम्बिका विराजिता।।
बावरे विलोकि मातु सेना सुप्रसन्न हुई।
देहभूता महाशक्ति चंडिका स्वराजिता।।55।।

मातृका अनीक देखि मुदित ईशान भाष्यो।
दुष्ट दल दलि के प्रसन्न मोहि कीजिये।।
चंडी कह्यो आपु देव ईश असुराधिप सो।
दूत बनि जाइके संदेशो एक दीजिये।।
त्यागि सुरलोक यज्ञ भाग सुर राज देई।
जाई पाताल निज राज्य सुखी जीजिये।।
बावरे न माने सीख बल के घमंड मांहि।
सकुल ससैन सर्वनाश जानि लीजिये।।56।।

शिवदूती शिव को बनाई के पठायो दूत।
शुम्भ सो संदेशो कह्यो जानु यह साँचि है।।
त्यागि सुरलोक भूलोक निज लोक जाहु।
नाता यातुधान कुल बीज नहिं बाँचि हैं।।
योगिनी अघैहैं लोथ खैहैं रक्तपान करि।
डाकिनी मनैहैं भोज प्रेतगण नाचि हैं।।
देवता रिसैहैं चमू धूल मिल जैहैं तोर।
नाम मिटि जैहैं जग युद्ध जब माचि हैं।।57।।

देवी को संदेशो सुनि शुम्भ महाकोप करि।
मानि अपमान बिनु आगि उर जरिगो।।
गरजि हँकारि निज सेनप पुकारि कह्यो।
करहु प्रहार खल मातुन्ह पै परिगो।।
एक ओर नारी दूजी ओर दैत्य धारि बल।
युद्ध घनघोर चहुँ ओर में पसरि गो।।
बावरे विखंड बहु रुंड रणमुंड हीन।
हा हा करि धावैं लखि कालहु हहरि गो।।58।।

कोऊ गहि खड़्ग प्राश शक्ति औ त्रिशूल कोऊ।
कोऊ खट्वांग गदा परशु प्रहारहीं।।
कोऊ चक्र मारिके उतारि शीश ढेर लायो।
काटि भुजदंड रुंड खंड खंड डारहीं।।
बाण बरसाई के विछिन्न कियो वाहिनी को।
पवन प्रचंड जिमि घन को विदारहीं।।
क्रुद्ध हुई मातृका विचित्र रणक्रीड़ा करैं।
बावरे विविध भांति दनुज संहारहीं।।59।।

आनन विशाल विकराल रद तीखे अति।
दीखे महाकाल सम काली खड़ी रण में।।
धाई धरि खाई भट कोटिन्ह चबाई जाई।
दावानल लागि मानो दानौदल वन में।।
काटे शीश फाटे पेट लोथिन्ह को ढेर लाग्यो।
सुभट कराहैं बहु घाव खायें तन में।।
कोटि गज बाजि भट महाभट खेत परे।
बावरे को पावै पार ताहि को गनन्ह में।।60।।

चक्र असि खड़ग सूल परसु प्रचन्ड मारि।
गाजि ललकारी मातृ शत्रु दल काटहीं।।
मंत्र पूत जल से विकल करि यातुधान।
वज्र के प्रहार खल दल दलि पाटहीं।।
मातृका प्रकोप भरि सपदि संहारि सेन।
यूथपति यूथ भेजि दियो यम घाटहीं।।
बावरे बिदारी अनि सारी जानि के सुरारि।
धाई रक्तबीज आई देखि ताहिं डांटहीं।।61।।

काम है सहज शत्रु जीव को जगत माहिं।
सोई रक्तबीज को साकार रूप धारी है।।
घोर तप कीन्हों विधि दीन्हो वरदान ताहिं।
वीर तिन्हुँ लोक कोउ सकत न मारी है।।
जेते बून्द रक्त के गिरैंगे महि आई तेते।
यातु उपजइहैं ताहि सम बलधारी है।।
बावरो विचारै मृत्यु मोहि न निहारै भूलि।
याहि मदमातो खल काल को बिसारी है।।62।।

रम्भ सुत गरजि तरजि धायो अम्बिका पै।
देखत नारायणी को कोप अति आई गो।।
चक्र को संभारी रक्तबीज पै चलाई दियो।
रक्त पर्‌यो भू पै बहु रक्तबीज छाई गो।।
धांई वज्रेश्वरी ने वज्र को प्रहार कियो।
एक हतिबे को पै अनेक उपजाई गो।।
बावरे भरी है रणभूमि रक्तबीजन्ह सो।
देखि के विचित्र गति देव अकुलाई गो।।63।।

मातृका सकोपि अस्त्र शस्त्र को प्रहार करि।
काटि महि डारें पै यतन वादि परि गो।।
देव अकुलाइ कहैं काह करि कहाँ जायें।
तिहुँ लोक मानो रक्तबीजन्ह सो भरि गो।।
सिंह धाई–धाई फारि खाई रक्तपान करै।
तऊ न नसाई खल मृत्यु को बिसरि गो।।
झपटि दपटि मूढ़ वार करै मातन्हि पै।
बावरे न जानै काल काली रूप धरि गो।।64।।

युद्ध घनघोर मच्यो शोर चहुँ ओर एक।
मारु धरि काटि डारु भाजि नहीं पावहीं।।
सिंह को दहाड़ चिघाड़ गज बाजिन्ह को।
शस्त्र को झंकार पै पिशाच प्रेत गावहीं।।
रक्त से नहाई मुंड माल से सजाई आपु।
योगिनी निकालि आंत तांत सो बजावहीं।।
डाकिनी हहाहिं स्यार कंक काक भोज खाहिं।
बावरे वीभत्स दृश्य देखि नहीं जावहीं।।65।।

आकुल बिलोकी सुर दैत्य को अमर मानि।
जानि सिंहवाहिनी भवानी मुसुकानी है।।
आपु रणक्रीड़ा करै मरम न जानै देव।
औरन की गति कहाँ मति अनुमानी है।।
बावरे विचित्र है चरित्र जगदम्बिका को।
सुकवि बखानै वेद भेद नहीं जांनी है।।
आपुहि उपाइ सुर असुर सजाई रण।
खेल दरसाइवे को आपु युद्ध ठानी है।।66।।

आतुर निहारि सुर अम्बिका बिहंसि बोली।
देवि महाकाली रक्तबीज वध करि दे।।
पापी को नचाय युद्ध क्रीड़ा दिखलाय दियो।
ताहि हित पिय के प्रमोद उर भरि दे।।
आनन उघारि करि रसना पसारि अति।
रक्तबीज रक्त पाई देव दुख दरि दे।।
बावरे सरैहैं कविवृन्द यश गैहैं सदा।
लोक सुख पैहैं महि भार अब हरि दे।।67।।

सुनी मातु काली खड़्ग खप्पर संभालि निज।
दनुज निपातन को प्रण करि लीन्हो है।।
बदन बढ़ाइ काढ़ि जीभ फैलाइ लियो।
घोर अट्टहास करि दैत्य बल छीन्हो है।।
योगिनी हंकारि कह्यो धाई जाइ घेरु खल।
भाजि नहीं पावै बहु देव दुख दीन्हो है।।
बावरे भयंकर प्रलयंकरी को रूप देखि।
कंप्यो त्रैलोक त्राहि त्राहि सब कीन्हो है।।68।।

सिंह पै विराजे मातु चण्डिका समर माहिं।
मातृका सशस्त्र यातुधान काटि पाटहीं।।
वज्र के प्रहार से बिदारी शत्रु शीशन्ह को।
चक्र को चलाइ रुंड अंग अंग काटहीं।।
रक्तबीज रक्त को प्रवाह रोपि आनन में।
कालिका पसारि जीभ चट्ट ताहि चाटहीं।।
बावरे नृशंस मनुजाद को विध्वंस करी।
महा जयघोष से आकाश मानो फाटहीं।।69।।

देवी चामुण्डा निज रसना पसारी महि।
रक्तबीज रक्त पाइ चाटि कै चबाइ गो
चण्डिका प्रचन्ड रूप धारि रणयज्ञ माहिं।
महापशु काटि ताकी आहुति चढ़ाइ गो
देववृन्द मुदित निहारि नभ मण्डल से।
जय–जय जगदम्ब गाइ पुष्प बरसाइ गो
बावरे निशुम्भ शुम्भ वाहिनी विनाश देखि।
प्रेरित कृतान्त मानो अम्बिका पे धाइ गो।।7

दैत्य को निपाति हत्यो रक्तबीज चण्डिका ने।
तृप्त भई कालिका अघाइ रक्त पाइ
मुण्डनि को ढेर देखि क्रीड़त पिशाच प्रेत।
नृत्य करै योगिनी कपाल को बजाइ
सुनि अकुलाई के निशुम्भ शुम्भ कोप करि।
आयो रण माहिं अति वाहिनी सजाइ
बावरे बिलोकि ताहिं मातृका प्रसन्न भई।
कियो शंखनाद घोर घंट घहनाइ के।।7

एक ओर शुम्भ औ निशुम्भ ले अनीक साथ।
करहिं प्रहार बहु अस्त्र शस्त्र मारहीं।।
दूजी ओर मातृका सरोष चक्र वाणनि सो।
बीचहिं में काटि ताहिं वार को निवारहीं।।
घोर घमासान युद्ध देखि के चकित देव।
सिद्ध मुनि थकित अवाक् होइ निहारहीं।।
बावरे दनुज दल घायल त्रसित अति।
भभरि भगात त्राहि त्राहि कै पुकारहीं।।72।।

क्रोधित निशुम्भ निज वाहिनी विनाश देखि।
वाहन बढ़ाइ धाई अम्बिका पे आइ गो।।
गाजि भाजि लरै छल बल को प्रयोग करै।
द्वन्द्व युद्ध देखि तिहुँ लोक थहराइ गो।।
वाण शूल शक्ति गदा असि को प्रहार कियो।
काटि ताहिं चण्डिका को कोप उर छाइ गो।।
बावरे संभारि धनु बाण उर तानि मार्‌यो।
सिलि मुख खाइ खल भूमि भहराइ गो।।73।।

पर्‌यो महि घायल निशुम्भ को निहारि शुम्भ।
रथारूढ धायो जगदम्बा के हनन को।।।
अमित विशाल अष्ट भुजनि संभालयो धनु।
सोहत आकाश शेष धारि ज्यों फनन को।।
कोप करि गरजि विशिख बरसायो बहु।
रह्यो नभ पूरि झरी लाइ ज्यों घनन को।।
बावरे बिहंसी अंब सरनि निवार्‌यो काटि।
जानि खल चाहे काल गाल में परन को।।74।।

दोऊ ओर जोर घोर शस्त्र को प्रहार होत।
दोऊ ओर आपुहिं बचाइ ताहिं काटहिं।।
असुर समूह मानो देखि घने कानन सो।
चक्र वज्र वाणनि सो मातु ताहिं छाटहिं।।
मातृका अनश्वर हैं नश्वर सुरारि वृन्द।
जानत न मूढ़ मानि खांड़ खंड चाटहिं।।
बावरे समर माहिं चण्डी रण क्रीड़ा करि।
करै अट्टहास तिहुँ लोक जनु फाटहिं।।75।।

घंट घोर वाद शंखनाद सिंह गाजनि सो।
तुमुल निनाद नभ मण्डल में छाइ गो।।
कालिका प्रकोपी महि मुष्टिक प्रहार करि।
पर्‌यो जनु गाज रिपु दल विचलाइ गो।।
रहु खल ठाढ़ ललकार सुनि चण्डिका के।
करि जयकार सुर धैर्य उर आइ गो।।
बावरे निहारि निज सेन अकुलानि जानि।
कोप्यो यातुधानपति लोक थहराइ गो।।76।।

धाइ शुम्भ आइ घोर शक्ति को प्रहार करि।
क्षारि भो चहत मूढ़ अक्षरा भवानी को।।
मातु रिसिआइ ताहि लूक से विध्वंस करि।
धूरि में मिलायो महा शस्त्र की निशानी को।।
गरजि भयंकर गुंजाइ के आकाश खल।
आयुध अनेक मारि बेध्यो महारानी को।।
बावरे सकोपि अंब शूल को चलाइ दियो।
धरनि ढहाइ दियो दुष्ट अभिमानी को।।77।।

शुम्भ है अचेत पै सचेत ह्वै निशुम्भ धाइ।
गरजि संभारि धनु बाण बरसावही।।
घायल कर्‌यो है सिंह कालि मातु चण्डिका को।
मूढ़ महामाया संग माया दिखरावही।।
धारि के सहस्र भुज चक्र शूल गदा गहि।
करइ प्रहार् मातु काटि के गिरावहीं।।
बावरे प्रकोपि चण्ड शूल गहि चण्डिका ने।
मार्‌यो रातिचरपति देव यश गावहीं।।78।।

शूल को प्रहार खल उदर विदारि दियो।
पर्‌यो भहराइ भूमि चेतना गंवाइ के।।
तासु उर फारिके प्रगट भयो यातुधान।
धाइ ललकारि दुष्ट अम्बिका पै आइ के।।
मातु मुस्काइ चन्द्रहास को उठाइ झट।
शीश को उतारि लियो धड़ से हटाइ के।।
बावरे हहरि खल दल अकुलाइ भाग्यो।
केहरि संहार्‌यो सेन फारिके चबाइ के।।79।।

देव मुनि मानव की दुर्गति हरत अंब।
याते दुर्गेश्वरी तुम्हारो अभिधान है।।
दुष्ट दल दलि के हरति भूमि भार सदा।
सुकवि सराहैं करि तेरो गुणगान है।।
दीनन की आरत पुकार सुनि धावति है।
तू ही जगदम्ब एक दया की निधान है।।
समर सजाइ लरै असुर समूह संग।
भेद यह जाने कहाँ बावरा अजान है।।80।।

घायल अचेत शुम्भ चेतना को पाई उठि।
देख्यो यातुधान चमु भाजि चलि जात है।।
वीरगति पाइ परेउ धरनि निशुम्भ जानि।
नारि हत्यो भाइ नाहिं उर पतियात है।।
हाय बन्धु हाय कटे शीश को निहारि कह्यो।
व्याकुल वियोग अति नाहिं सहि जात है।।
बावरे सकोप धनु धारि धायो रण माहिं।
ठाढ़ि रहो बातनि सो करत आघात है।।81।।

बंधु वध देखि के संभालि शेष सेन संग।
धायो यातुधानपति आयो जहाँ चण्डिका।।
दैत्य दल दहलि हहरि हिय हार मानि।
तजे प्राण आस जानि वीर बरबण्डिका।।
शुम्भ अति क्रोध से चबाई ओठ हौक भरे।
देखि खड़ी तात की सहस्र बाहु खण्डिका।।
बावरे बिहाल है कराल काल हाथनि में।
मानत न मूढ़ पहिचानि देव मण्डिका ।।82।।

प्राण प्रिय भ्रात के वियोग से व्यथित होइ के।
वाहिनि निपात देखि ताप उर भारी है।।
काल से ग्रसित महाक्रोध से त्रसित अति।
धाइ मूढ़ आयो जहाँ लोक महतारी है।।
कहे दुष्ट दुर्गे घमण्ड तोहि मान बड़ो।
आन बल साथ पायि दनुज संहारी है।।
बावरे बिसारि प्रण युद्ध में कपट करी।
लड़े कहाँ एक तू अनेक संग नारी है।।83।।

असुराधिपति को उलाहनो सरोष सुनि।
मातु मुस्काई कह्यो मूढ़ कहा जानै तू।।
एक हौं अनन्त अन्त मेरो कहां सृष्टि मांही।
देखि मम वैभव अनेक करि मानै तू।।
शक्ति को प्रकाश रूप नारी सचराचर की।
मातृका अभेद मांहि भेद अनुमानै तू।।
बावरे प्रभिन्न भिन्न रूप है अभिन्न मेरो।
दूजो नहीं और एक मोहीं पहिचानै तू।।84।।

भिन्न–भिन्न रूप भिन्न नाम भिन्न वाहन पै।
भिन्न धारि आयुध विराजै देवि रन में।।
मातु परमेश्वरी के नयन को सयन पाइ।
पल मांहि सकल समानि तासु तन में।।
देख्यो अति अद्‌भुत चरित्र असुराधिपति।
भई जगदम्बिका एकाकी एक छन में।।
सिंह पै सवार अट्टहास करै बार–बार।
बावरा निहारि के निहाल होत मन में।।85।।

एक से अनेक रूप धारि सुर नारिन्ह को।
अ‍सुर संहारि मही भार दूर करि कै।।
देव दु:ख मेटि के समेटि लियो मातुन्ह को।
सिंह पै विराजै रति कोटि छवि धरि कै।।
विहंसी निहारि अंब शुंभ से पुकारि कह्यो।
देखु मैं एकाकी मूढ़ रहे तू संभरि कै।।
बावरे सुनत ललकार मातु अम्बिका की।
गरजि बढ़ाई रथ आयो कोप भरि कै।।86।।

अति अभिमानी है असुर बलवान महा।
कांपै सुरलोक जासु नाम सुनि भय से।।
देवन्ह पछारि ताहिं धाम से निकालि दियो।
भयो उन्मत्त तिहुँ लोक के विजय से।।
मोह बस मूढ़ पराशक्ति से समर ठानी।
बांधव- ससैन न बचाइ सक्यो क्षय से।।
बावरे अजान ताहिं जीतिबे को चाह करै।
जाकी एक दृष्टि होत सृष्टि औ प्रलय से।।87।।

मच्यो घोर युद्ध असुराधिप को अम्बिका से।
खड़े देवे दनुज चकित चित्त ताकहिं।।
दिव्य अस्त्र शस्त्र से प्रहार करै दानवेन्द्र।
मारि हुंकार मां मिलाइ देत खाकहिं।।
कोपि दनुजाधिप सरासन संभारि लियो।
महासर वृष्टि से आकाश मानो ढाकहिं।।
बावरे निवारि मातु वाणनि चलाइ बींधियो।
बहे रक्तधार सो पिशाच प्रेत छाकहिं।।88।।

कभी चक्रशूल कभी गदा को प्रहार करै।
कभी धनुधारी दुष्ट वाण बरसाइ के।।
कभी महामुदगर उठाइ धाइ मारिबे को।
अम्ब को हनन चाहे शक्ति को चलाइ के।।
जीतिबो चहत मूढ़ मातु अपराजिता को।
महाबली दैत्य बाहुबल दिखराइ के।।
बावरे यतन भये ताके फल हीन ऐसे।
करे कोउ दान जैसे पाप से कमाइ के।।89।।

धाइ बार–बार बहु आयुध प्रहार करै।
मातु काटि काटि ताहिं भूमि पै गिरावहीं।।
रथ को विभंजि ताको सारथि निपात करी।
पर्‌यो भहराइके संभारि उठि धावहीं।।
अस्त्र शस्त्र हीन आई मुष्टिका से घात कियो।
चण्डी को चपेट खाई दुष्ट बिकलावहीं।।
बावरे उछालि अंब पकरि आकाश जाइ।
करै द्वन्द्व युद्ध देखि देव भय पावहीं।।90।।

विश्व की आधार निराधार नभ मण्डल में।
करै रण क्रीड़ा लिये शुम्भ अभिमानी को।।
सभय निहारिं सुर अभय बनाइबे को।
जग से मिटाइबे को पाप की निशानी को।।
पकरि उठाइ के आकाश में घुमाइ ताहिं।
धरा पै पटकि मार्‌यो देव दुःख दानी को।।
बावरे संभारि उठि अम्ब को हनन धायो।
देखि महाक्रोध उर छाइगो शिवानी को।।91।।

करुणा की खानि मातु हिय को कठोर करि।
शूल को संभारि लियो शुम्भ के निपात को।।
प्रबल प्रहार करि उर को विदारि दियो।
हाहाकार मच्यो देखि अस्त्र के आघात को।।
पर्‌यो भहराई धरा धसकी कमठ कांप्यो।
भयो घोर शब्द मानो महा वज्रपात को।।
प्राण उड़ी तासु महाप्राण में समाई गयो।
बावरा मुदित देखि दनुज विघात को।।92।।

हति के निशुम्भ शुम्भ रण में विराजैं अंब।
केहरि विदारी फारि धारि यातुधान की।।
प्रकृति प्रसन्न तिहुँ लोक भयहीन भयो।
बहि रस धार नवजीवन विधान की।।
सरित प्रपात सुचि शीतल पीयूष सम।
त्रिविध बियारी सुखदाइ पवमान की।।
पावक प्रगटि यज्ञ कुण्ड को प्रकाश कियो।
देवता मुदित भाग पाइ सोमपान की।।93।।

शुम्भ को संहारी लोक कंटक मिटाई दियो।
देवता विमुक्त देखि दाती सुख पावहीं।
गाई गंधर्व अम्ब महिमा बखान करैं।
नृत्य करैं अप्सरा प्रसून बरसावहीं।
पावन प्रकाश तिहुँ लोक में प्रभात भयो।
कियो तम दूरि भूरि आनंद मनावहीं।
मिट्यो उतपात पाप ताप को विनाश लखि।
बावरा मुदित नित मातु गुण गावहीं।।94।

देववृन्द सहित सुरेन्द्र तहँ आइ देख्यो।
सिंह पै विराजै अंब भार महि हरि कै।
बार–बार करत प्रणाम सुर पायं परि।
मातु गुणगान करैं भाव हिय भरि कै।
पाहि परमेश्वरी सुरेश्वरी जगत पाहि।
होउ माँ प्रसन्न देखु दया दृष्टि करि कै।
बावरे सकल लोक शरण तिहारि सदा।
करउ संभाल ताकि प्रण चित्त धरि कै।।95।

मोह मद शुम्भ औ निशुम्भ को विनाश करि।
मति अति सात्त्विकी विराजै मातु अम्बिका।।
जीव को विकास निज पिय को प्रकाश देखि।
करति संभाल भई तासु अवलम्बिका।।
व्यष्टि रूप बुद्धि के स्वरूप में विभासि रही।
कारण समष्टि रूप तू ही भव दम्बिका।।
बावरे विराग धर्म ज्ञान ऐश्वर्य सभी।
तेरे ही प्रभाव को आभास जगदम्बिका।।96।।

प्रभा अरु रात्रि तू ही प्रज्ञा औ भ्रान्ति रूप।
तृष्णा औ शान्तिं सब तेरे ही विलास हैं।।
देव अरु दानव पुण्य पाप मुनि मानव के।
स्वर्ग औ नरक महामाया के निवास हैं।।
युद्ध औ प्रीति द्वेष राग औ अनीति नीति।
दु:ख सुख जेते जग द्वन्द्व के आभास हैं।।
बावरा विचारै दृष्टि जहां लौ पसारै अंब।
दृश्य रूप सारे तव आभा के प्रकाश हैं।।97।।

तू ही परमेश्वरी परावर की आदि अन्त।
करै अति कौतुक चराचर उपाइ कै।।
तू ही जग तारनी जननी जग जीवन्ह को।
करति सम्भाल बहु भेष में सजाई कै।।
भुवन अनन्त की अधीश्वरी महान अति।
मति रूप राजै लघु जीवन्ह में आई कै।।
बावरे अभाव भाव तेरो ही प्रभाव अंब।
वेद थकि हारे नेति–नेति नित गाइ कै।।98।।

भृकुटी विलास से प्रभव भव होत नित।
पालन प्रलय करे पलक उघारि कै।।
सोई सर्वेश्वरी साकार रूप धारि आई।
हरै महि भार सदा दनुज संहारि कै।।
ताकत तरेरी देखि कांपत कराल काल।
करै रण क्रीड़ा बहु आयुध संभारि कै।।
शस्त्र से पुनीत दैत्य आपु में मिलाइ लेत।
बावरा विभोर मातु कौतुक निहारि कै।।99।।

पाहि दुर्गेश्वरी महेश्वरी शरण पाही।
पाही परमेश्वरी सुरेश्वरी दयामयी।।
पाहि भुवनेश्वरी विश्वेश्वरी जनेश्वरी मां।
पाहि कालेश्वरी तपेश्वरी लयामयी।।
पाहि सर्वेश्वरी सदेश्वरी चिदेश्वरी मां।
पाहि कामेश्वरी गोपेश्वरी हयामयी।।
बावरा प्रणत पाहि मातु ज्ञानेश्वरी को।
पाहि करुणेश्वरी मातेश्वरी मयामयी।।100।।

पराशक्ति प्राकृत प्रपंच की प्रकाशिका तू।
जनिके अनन्त जीव जग को संवारती।।
बुद्धि बोध विद्या औ अविद्या के प्रभेद रूप।
सम्भव असम्भव में त्रिगुण प्रसारती।।
नारी को स्वरूप महतारी सचराचर की।
भुक्ति मुक्ति दाती भक्ति भाव भव तारती।।
बावरे विभूति भूति भुवन प्रसूति अंब।
पिय को प्रसन्न करि सकल संहारती।।101।।

तू ही भवभामा बनि श्यामा रति कोटि छवि।
भुवन विमोहनी चराचर की गति है।।
असुर अधम तेरो मरम न जानै मूढ़।
तोहि पहिचानै किमि वासना में रति है।।
ऐसेऊ कपूतन्ह को शस्त्र से पुनीत करि।
देत शुभ गति ताहि ताकि काह छति है।।
कोप औ कृपा में तेरी करुणा निहारि अम्ब।
बावरा बखान करै ऐसी कहाँ मति है।।102।।

आपु एक छत्र नभ अमित नक्षत्र भूमि।
राखति प्रलम्ब अम्ब प्रभुता तुम्हारी है।।
असत प्रपंच सत रूप में विभासि रह्यो।
भुवन अनन्त यह तेरो उजियारी है।।
लखि न परत तेरो अलख अरूप मातु।
देव कहाँ जाने तू त्रिदेव महतारी है।।
महत महान अति अणु तव रूप मति।
बावरा विचारी भो विभोर बलिहारी है।।103।।

पाहि परमेश्वरी प्रंपच से उबारि पाहि।
पाहि जगदम्ब अभिचार अनाचार से।।
पाहि दुष्ट संग से कुसंग से-बचाई पाहि।
पाहि हे रम्ब अंब मोह मद मार से।।
पाहि काम क्रोध लोभ मारिके महान रिपु।
पाहि अस्त्र शस्त्र शत्रु आयुध प्रहार से।।
पाहि पाप ताप शोक शूल से त्रिशूली पाहि।
बावरा प्रणत पाहि बुद्धि के विकार से।।104।।

अम्ब परब्रह्म को स्वरूप सत चित रूप।
पुरुष प्रधान दोऊ तेरे ही विकास हैं।।
शून्य औ अशून्य क्षर अक्षर असत सत।
मातु सर्वेश्वरी के सहज प्रकाश हैं।।
शिव को प्रसाद बहु जीव को प्रगटि जग।
भोग योग साधना में करती विलास है।।
एक अद्वैत में अनेक भाव भासि रही।
बावरा निहारि हिय अमित उल्लास है।।105।।

कातर निहारि दीन आरत पुकारत है।
चाहत है त्राण अम्ब तुम्हरी शरण में।।
पीड़ित पिशाच पाप तापत त्रिविध ताप।
होत न सहाय कोऊ विपदा हरण में।।
पामर पतित भव रोग से ग्रसित सुत।
राखति सँभारि मातु अपने करन्ह में।।
बावरे की ओर करि कोर करुणा निहारि।
देऊ नित ठाँव निज पावन चरण में।।106।।

गोद महतारी ले विनोद से निहारि लेइ।
ताहि से सुखद तिहुँ लोक कहाँ धाम है।।
शोक से ग्रसित भवताप से तपित ताको।
अम्ब को उछँग एक शीतल सुठांव है।।
त्यागि सब आस सर्वेश्वरी शरण आई।
पाई के सुपास जन होत निष्काम है।।
केहरि सहारे जगदम्ब को निहारि नेक।
बावरा निहाल करे कोटिन्ह प्रणाम है।।107।।

सिंह के सहारे अम्ब राजै नभ मंडल में।
मोहित भुवन लखि रूप छविधाम है।।
शंख चक्र गदा गहे देखि के वरद हस्त।
दीन जन आश्रित लहत अभिराम है।।
आपदा हरत सब बाधा को करत दूरि।
गावत सुकवि भूरि कीरति ललाम है।।
निरालम्ब बापुरे को तू ही अवलम्ब मातु।
बावरा करत कोटि कोटिन्ह प्रणाम है।।108।।

सरस विशाल लाल लोचन हैं अम्बिका के।
मानहुँ अरुण कंज भरे मकरन्द सों।।
एक ओर सहज सनेह से निहारि रही।
दूजी ओर ताकती तरेरी निर्द्वन्द्व सों।।
देव मुनि मानव पै करुणा बरसि रही।
देखत दनुज भय देति यम फंद सों।।
अद्‌भुत प्रभाव तव नयन को निहारि अंब।
बावरा नमन नित पूरित आनंद सों।।109।।

अरुण जलज सम सुभग मृदुल मंजु।
दीन जन आश्रित चरण सुखधाम हैं।।
अंकुश कुलिश ध्वज शंख धनु कंजयुत।
मंगल सुरेखन्ह से शोभित ललाम हैं।।
पावन विभूषण से भूषित पदज चारु।
चंद्र नखचंद्रिका को शीतल सुठाम हैं।।
बावरे निहारे पाप तांप तम दूरि होत।
मातु पद पंकज में कोटिन्ह प्रणाम हैं।।110।।

मातु के पदज नख चंद्र से छिटकि रही।
चंद्रिका प्रभास अस समुझि परत है।।
मानहु शरद शशि पूरण उदित दस।
चाँदनी पसारि तम ताप को हरत है।।
किधौं देव सरिता की पावन धवल धार।
बरसि फुहार जग शीतल करति है।।
बावरा निहारि नेक मातु के चरण नख।
बंदन करत कोटि उर में धरत है।।111।।

तेरे पद पंकज को पावन पराग अम्ब।
दोष दुख दारिद विनाशत समूल को।।
अंजन लगाइ के निरंजन को बोध होत।
शीश पै चढ़ाये से सुधारि देत भूल को।।
मूल है संजीवनी अमर पद द्याइबे को।
सेवन किये ते हरि लेत त्रयशूल को।।
बावरो सभीत भव भीति सो उबारिबे को।
बंदन करत कोटि मातुपद धूल को।।112।।

गहि के त्रिशूल भवशूल को हरत अम्ब।
चक्र को संभारि भवचक्र से उबारती।।
अंकुश दिखाई मनमत्त को स्वबस करै।
गदा गहि मान मदमत्सर निवारती।।
पास मोह पास से विमुक्त करि दासन्ह को।
शंख के निनाद उर बोध विस्तारती।।
बावरे कोदंड काल कलना विविध बाण।
कोटिन्ह नमन मातु आयुध जो धारती।।113।।

शौर्य शक्ति साहस साकार रूप केहरि को।
ताहि पे विराजति विभूति रूप आप है।।
बोध असि गहि के असंग ढाल हाथ लिए।
मोह तम नाशै जगदम्ब को प्रताप है।।
सत्त्व से विहीन बलहीन पराधीन मातु।
ऐसो जग जीवन प्रगट अभिशाप है।।
बावरा विचारे अम्ब कृपा के सहारे बिनु।
कहाँ सुख शान्ति कहाँ मिटत त्रिताप है।।1 1 4।।

परम प्रशान्त योगनिद्रा में विराजे प्रभु।
आपुहि विनोद हेतु पंकज प्रकाशती।।
विरचि विरंचि तामें चेतना प्रदान करि।
ताहि भय हेतु मधु कैटभ विकासती।।
देखि के अधीर विधि आरत पुकार सुनि।
प्रभु को जगाइ दोऊ असुर विनाशती।।
बावरे निहारि तव चरित विचित्र अम्ब।
होत है थकित गति मति नहीं भासती।।1 1 5।।

ब्रह्म ज्योति व्यापक जो देवन्ह त्रिदेवन्ह में।
धारति प्रभिन्न रूप भिन्न अभिधान है।।
महिष सन्ताप से त्रिलोक त्राहि त्राहि कहि।
आरत पुकार्‍यो तोहि पावन को त्राण है।।
प्रगटि समेटि दिव्य तेज सब देवन्ह को।
देवी रूप धारि अम्ब करुणानिधान है।।
बावरे संहारि दैत्य देव दुख दूरि कियो।
गावत सुयश नित सुकवि सुजान है।।116।।

असुर संहारि सुरवृंद सुरलोक थापि।
दियो वरदान लोक मंगल करन को।।
धरम नसैहैं दुष्ट दानव सतैहैं देव।
धारि तनु ऐहौं सर्व बाधा के हरन को।।
कहा भयो अम्ब तोहि पन को निभाओ आई।
सुजन पुकारैं दोष दारिद दरन को।।
पाप को पसार चहुँ ओर हाहाकार देखि।
बावरा निहारे मातु तुम्हरे चरन को।।117।।

नमो मातु वाहन मृगेन्द्र को नमन कोटि।
नमो तासु पीठ जहाँ अम्बिका विराजती।।
नमो अस्त्र शस्त्र जाको धारण करत अंब।
नमो चर्म वर्म जाहिं युद्ध साज साजती।।
नमो देव वृन्द मुनि वृन्द को नमन नित्य।
जासु हित चंडिका अनेक रूप राजती।।
बावरा नमत असुराधिप असुर जाहिं।
आपु में मिलाई मातु विश्व रूप भ्राजती।।118।।

नमो दुर्गेश्वरी के त्रिविध स्वरूप नित्य।
नमो नित्य त्रिविध चरित्र सुखधाम है।।
नमो परमेश्वरी को पावन त्रिविध बीज।
नमो अखिलेश्वरी स्वरूप अभिराम है।।
नमो भुवनेश्वरी सदेश्वरी चिदेश्वरी को।
नमो कामेश्वरी करति निष्काम है।।
नमो जगदीश्वरी मां जगत सम्भालु आइ।
बावरा करत कोटि कोटिन्ह प्रणाम है।।119।।

अम्ब तुम एक हो अनेक रूप राजति है।
वृहद् विसृष्टि तव काव्य को स्वरूप है।।
कपा बरसाइ जांहि मर्म समुझाई देति।
पावन प्रसाद पाइ होत कवि भूप है।।
सत को प्रकाशि चित अचित को बोध देत।
तम को प्रसारि डारि देत मोह कूप है।।
मातु पद पंकज में कोटिन्ह प्रणाम करि।
बावरा मगन पाई आपनो स्वरूप है ।।120।।

मातु करुणेश्वरी को करुणा प्रसाद पाई।
चंडिका शतक यह पूर्ण सम्पन्न भो।।
पढ़ैंगे सुनैंगे नित्य चिन्तन करैंगे भाव।
हिय में धरैंगे तापै अम्बिका प्रसन्न भो।।
शान्ति सुख लैहैं भेद भ्रम मिटि जैहैं सदा।
भुक्ति मुक्ति पैहैं भक्ति भाव से प्रपन्न भो।।
बावरा मुदित सर्वेश्वरी सुयश गाई।
करत प्रणाम कोटि कवि कुल धन्य भो।।121।।

दोहा

नमो मातु सर्वेश्वरी नमन कोटि सतबार।
पराशक्ति परमेश्वरी महिमा अमित अपार।।

श्रुति गावत नित नेति कही सुकवि बखानैं जांहि।
हौं अति लघुमति बावरो किमि वरनौं यश तांहि।।

वेद विदित कवि ऋषि महाँ सुवन शारदा केर।
ताको वंशंज मातु हौं कृपा दृष्टि करि हेर।।

तेरो कृपाप्रसाद से राखि हृदय विश्वास।
मातु चंडिका शतक यह पावन कियो प्रकाश।।

श्रुति सम्मत सिद्धान्त यह सकल शास्त्र को सार।
पाइहिं सो याहि शतक महुँ जिनके विमल विचार।।

शतक चंडिका मातु की पूरण तत्त्व प्रकाश।
भुक्ति मुक्ति नर पाइहैं पढ़िहैं करि विश्वास।।

गुरुजन सज्जन सुधीजन साधक जन सिर नाई।
शतक समर्पत बावरा स्वीकारो हरषाई।।

श्रीदुर्गाजी की आरती

जगजननी जय! जय!! माँ! जगजननी जय! जय!!
भयहारिणि, भवतारिणि, भवभामिनि जय! जय!! जग॰
तू ही सत–चित्त–सुखमय शुद्ध ब्रह्मरूपा।
सत्य सनातन सुन्दर पर–शिव सूर–भूपा।।1।। जग॰
आदि अनादि अनामय अविचल अविनाशी।
अमल अनन्त अगोचर अज आनन्दराशी।।2।। जग॰
अविकारी, अघहारी, अकल, कलाधारी।
कर्त्ता, विधि, भर्त्ता हरि, हर सँहारकारी।।3।। जग॰
तू विधिवधू, रमा, तू उमा, महामाया।
मूलप्रकृति विद्या तू, तू जननी, जाया।।4।। जग॰
राम, कृष्ण तू, सीता, ब्रजरानी राधा।
तू वाञ्छाकल्पद्रुम, हारिणि सब बाधा।।5।। जग॰
दश विद्या, नव दुर्गा, नानाशस्त्रकरा।
अष्टमातृका, योगिनि, नव नव रूप धरा।।6।। जग॰

तू परधामनिवासिनि, महाविलासिनि तू।
तू ही श्मशानविहारिणि, ताण्डवलासिनि तू।।7।। जग॰

सुर–मुनि–मोहिनि सौम्या तू शोभाऽऽधारा।
विवसन विकट–सरूपा, प्रलयमयी धारा।।8।। जग॰

तू ही स्नेह–सुधामयि, तू अति गरलमना।
रत्नविभूषित तू ही, तू ही अस्थि–तना।।9।। जग॰

मूलाधारनिवासिनि, इह–पर–सिद्धिप्रदे।
कालातीता काली, कमला तू वरदे।।10।। जग॰

शक्ति शक्तिधर तू ही नित्य अभेदमयी।
भेदप्रदर्शिनि वाणी विमले! वेदत्रयी।।11।। जग॰

हम अति दीन दुखी माँ! विपत–जाल घेरे।
हैं कपूत अति कपटी, पर बालक तेरे।।12।। जग॰

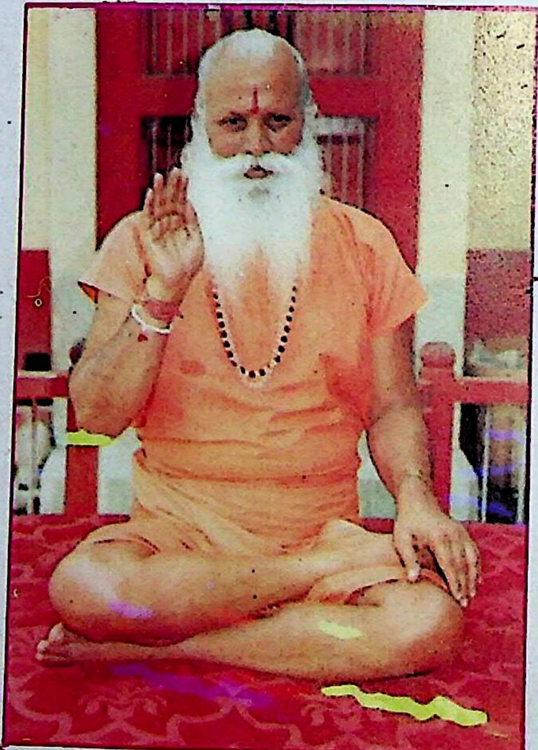
निज स्वभाववश जननी! दयादृष्टि कीजै।
करुणा कर करुणामयि! चरण–शरण दीजै।।13।। जग॰

सम्पर्क सूत्र

1. ब्रह्मर्षि आश्रम, विराट नगर,
   पो. ओ. पिंजौर (हरियाणा) पिन 134102
   फोन – 01733/65170, 65270, 65205
2. ब्रह्मर्षि योगाश्रम
   28–बी, पंचशील गार्डन,
   नवीन शाहदरा, दिल्ली–110032
   फोन – 011-2273660, 2271943
3. ब्रह्मर्षि बावरा शिक्षा निकेतन (अंग्रेजी मीडियम)
   बेअन्तपुरा, चण्डीगढ़ रोड़, लुधियाना
   फोन 0161/666406, 608406
4. Metaphysical Science Research Institute
   Sector 19-A, Chandigarh, Ph. : 0172/775390
5. Brahmrishi Ashram
   278, Heston Road, Heston
   Middlesex TW5 ORT U.K., Ph. : 0181-571-3879
6. Brahmrishi Ashram
   717, Loosduinsweg, 2571 AM-Denhaag
   Nederland. Ph. : 070-3620961
7. Brahmrishi Mission of Canada
   Shri-RAM-DHAM Hindu Temple
   525 Bridge Street,
   East Kitchener, Ontario
   CANADA N2K3C5, Ph. : 519-579-1486

हमारे प्रकाशन

श्रीमद्भगवद्गीता धर्म विज्ञान भाष्य (अध्याय १ एवं :
श्री चण्डिकाशतक • श्री श्यामशतक • मानस में धर्म
रामो विग्रहवान् धर्मः • मानस महाकाव्य में नारी
गीता तत्त्व बोध • मानस के मोती • जीवन विज्ञा
भारत की आत्मा • सहज समाधि भली • योग प
नारी! तुलसी की दृष्टि में • शिव तत्त्व बोध • समाध
क्या वर्ण–व्यवस्था अभिशाप है ? • राम नाम महिम
ब्रह्मविद्या विज्ञान–प्रथम • ब्रह्मविद्या विज्ञान–द्वितीय
तत्त्व चिन्तन • सन्त सन्देश • नारद भक्ति सूत्र
हिन्दू धर्म सूत्र • गीतोक्त बुद्धियोग • काव्य सुध
श्री शिव शतक • Yoga for life • How to be a Yo
The Hindu & its way of Life • Towards Divinity
Essence of the Gita • Basic Principles of Yoga
श्री हनुमत विनय पच्चीसी • गीता ज्ञान विज्ञान यो
• आपकी अपनी बात • योगांकुर • साधना सूत्र
• गीता कर्म विज्ञान • विश्व को हिन्दुओं का योगद
• मानस में वैदिक सिद्धान्त • सन्त लक्षण •
श्री हनुमत हृदय • Meditation Technique
Science of the Absolute Knowledge
(Commentary on The Ishopanishad)
•Lord Hanuman-Our Ideal
•Science of the Stable Wisdom



ब्रह्मर्षि विश्वात्मा बावरा जी महाराज